ISSN:- 2231-5063

Golden Research Thoughts

केशव टेकाम

सहायक प्राध्यापक, डॉ. हरीसिंह गौर वि.वि. सागर, म.प्र.

मध्यप्रदेश में कृषि विकास की समस्याएं एवं चुनौतिया

सारांश :-

मध्यप्रदेश की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है तथा रोजगार की दृष्टि से कृषि पर अधिक निर्भर है। कृपि में वर्ष 2006–2007 और 2010–11 के बीच (वर्तमान मूल्यों) पर सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र के योगदान में लगभग 13.5 प्रतिशत वृद्वि हुई है। मध्यप्रदेश सोयाबीन (59%), चना (39.5%), दलहन (25.3%), तिलहन (25.2%) के उत्पादन में देश में प्रथम स्थान पर है। प्रदेश में गेहू का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है। वर्ष 2011–12 में यह 127.20 लाख मीट्रिक टन था। गेहू की उत्पादकता 2705 किग्रा. प्रति हेक्टैयर प्राप्त हुई जो वर्ष 2008–09 की तुलना में 42.74% अधिक है। प्रदेश में औसत ऊर्जा उपभोग 0.85 KW/HA है। प्रदेश में कुल सिंचाई क्षेत्र 2011–12 में 16.35 लाख हैक्टैयर हो गया जिसमे 9 लाख हैक्टैयर की वृद्धि हुई है। सामान्य वर्षा की स्थिति 911.9 मि.मी. जो वर्ष 2012 में 992.4 मि.मी. थी वर्षा में 9 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई।

प्रस्तावनाः—

प्रदेश में खरीद फसलों का सामान्य क्षेत्र 104.05 लाख हैक्टेयर है जो 2012 में 114.70 लाख हैक्टैयर हो गया। खरीफ फसलों का कुल उत्पादन जहां 99.28 लाख टन था 2012 में बढकर 141.16 लाख टन हो गया। खरीफ फसलों की उत्पादकता सामन्यतः 954 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर आंकी गई थी जो 2012 में बढ़कर 1214 कि.ग्रा. प्रति हैक्टैयर हो गई वर्ष 2008 में 8.89 लाख क्विंटल खरीफ फसलों के बीजों का वितरण किया गया था जो 2012—13 में बढ़कर 17.65 लाख क्विंटल हो गया। रबी की फसलों का कुल क्षेत्रफल 2011—12 में 98.24 लाख हैक्टैयर अनुमान लगाया गया था जो बढ़कर 2012—13 में 103.90 लाख हैक्टैयर हो गया। रबी फसलों का कुल उत्पादन वर्ष 2012—13 में 154.89 लाख टन अनुमानित था जो बढ़कर 191.69 लाख टन हो गया। 2011—12 में रबी की फसलों की कुल उत्पादकता 1577 कि.गा. प्रति हैक्टैयर अनुमानित थी जो 2012—13 में 1845 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर हो गई।

कृषि भूमि उपयोग :—

मध्यप्रदेश में कृषि भूमि का प्रादेशिक वितरण बहुत असमान है। प्रदेश में तीन ऐसे क्षेत्र है, जहाँ कुल ग्रामीण क्षेत्र के अनुपात में निरा बोया गया क्षेत्र 50 प्रतिशत से अधिक है।

1.चम्बल की घाटी तथा निकटवर्ती ग्वालियर और दतिया का कृषि क्षेत्र।
2.मालवा का पठार जो पूर्व में रायसेन—भोपाल तक फैला है।
3.रीवा—पन्ना का पठार जो उत्तर में यमुना की घाटी तक है।

ये भाग अपेक्षतया समतल है, यहाँ ढाल कम है और उपजाऊ मिट्टी पायी जाती है। ढाल कम होने से कृषि कार्य में सरलता होती है। यातायात और अन्य सुविधाओं का विकास इसमें सहायक है। दूसरी ओर 1. बुन्देलखण्ड का पठार, 2. मेकल सतपुड़ा श्रेणी 3. छतरपुर एवं टीकमगढ़ का पठारी और कटा—फटा क्षेत्र तथा 4. विंध्य श्रेणी ऐसे क्षेत्र है जहाँ निरा बोया गया क्षेत्र कुल भूमि का एक तिहाई अथवा उससे कम है। बघेलखण्ड के कुछ भागों में यह क्षेत्र केवल 19.15 प्रतिशत के लगभग ही है। स्पष्ट है कि पठारी और पहाड़ी बनावट के कारण यहाँ कृषि की बहुत सीमित संभावनाएँ हैं। अधिकांश भाग पर छिछली, कंकरीली, पथरीली लाल—पीली मिट्टी पायी जाती है, जिसमें पौधों के पोषक तत्वों की कमी है। ऐसी भौतिक दशाओं में कृषि कार्य कठिन हो जाता है। उत्तर पश्चिम मध्यप्रदेष में औसत वर्षा भी अपेक्षतया कम होती है। यह भी कृषि की संभावनाओं को कम कर देती है तथा केवल वे ही फसलें है जो कम आर्द्रता में होती है।

मध्यप्रदेश में कृषि जोत :— मध्यप्रदेश में कृषि जोतों के तीन प्रकार है :—

1. सीमांत / छोटी जोतें, 2. लघु जोत, 3. अन्य जोत

मध्यप्रदेश की सीमांत एवं लघु आकार की जोते अनार्थिक जोतें है। यह जोतें सामान्यतः 1 से 2 हेक्टेयर की होती है। इससे कृषकों को किसी भी प्रकार की आर्थिक बचतें प्राप्त नहीं होती इस प्रकार की जोतों वाले किसान वास्तव में बड़े किसानों से भूमि "बटिया" पर लेकर कृषि कार्य करते है। मध्यप्रदेष में जोतों के आकार एवं कृषकों की संख्या को तालिका 3.02 द्वारा दर्षाया गया है।

तालिका क्र.1

मध्यप्रदेश में जोतों की संख्या एवं क्षेत्र

संख्या : प्रतिशत में
क्षेत्र : प्रतिशत में

सीमांत जोतें (1 हेक्टेयर से कम)		लघु जोतें (1 हेक्टेयर से अधिक एवं 2 हेक्टेयर से कम)		अन्य जोतें (2 हेक्टेयर से अधिक)		योग	
संख्या	क्षेत्र	संख्या	क्षेत्र	संख्या	क्षेत्र	संख्या	क्षेत्र
40.45	9.92	27.17	19.23	32.38	70.85	100	100

स्रोत : www.agricoop.nic.in

तालिका क्रमांक 1 के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वर्ष 2010—11 की स्थिति में कृषि हेतु कुल क्षेत्र सीमांत कृषकों के पास 40.45 प्रतिशत था जिनकी संख्या 9.92 प्रतिशत थी। लघु कृषक जिनकी संख्या 27.17 प्रतिशत थी उनके पास कृषि क्षेत्र 19.23 प्रतिशत था। शेष कृषक 32.38 प्रतिशत थे जिनके पास कुल कृषि भूमि 70.85 प्रतिशत थी। मध्यप्रदेश में कृषि भूमि का वितरण असमान है। जोतों का आकार छोटा है जिस पर अधिक जनसंख्या का भार है। जनसंख्या के बढ़ते दबाब के कारण जोतें विभाजित होकर और छोटी होती जा रही हैं।

मध्यप्रदेश में कृषि विकास की चुनौतियां :—

सीमित सिंचाई और अविकसित कृषि पद्धति के कारण प्रति हेक्टेयर न्यून उत्पादन प्रदेश की सबसे गम्भीर समस्या है। मध्यप्रदेष में अधिकतर भूमि खाद्यान्नों के अंतर्गत है, जिनमें व्यापारिक फसलों की तुलना में आर्थिक उत्पादन कम होता है। अच्छे बीज, मशीनें, कीटनाशक, रासायनिक उर्वरक तथा भूमि संरक्षण इत्यादि के आधुनिक ढंग बहुत सीमित क्षेत्रों में अपनाये गये है। सिंचाई के साधनों का भी समुचित विकास नहीं हुआ है। कंकरीली और छिछली मिट्टी के क्षेत्रों में उत्पादन और भी कम है। मध्यप्रदेश में परिवहन के साधन भी कई अन्य राज्यों की तुलना में कम है। अतः विस्तृत कृषि प्रदेशों में आधुनिक सुविधाएँ पहुँचाना और उत्पादन को बाजार तक लाना एक अन्य समस्या है। कृषि विकास के

मार्ग में यह एक गम्भीर बाधा है।

1.फसल प्रतिरूप की चुनौती :–

म.प्र. में फसल प्रतिरुप की स्थिति चिंताजनक है। फसल प्रतिरूप स्वतंत्रता के 60 वर्षों बाद भी पारंपरिक ही है। परंतु नई तकनीक का विकास और उपयोग धीरे–धीरे होने लगा हैं यह एक अच्छा सूचक कहा जा सकता हैं। अधिकांश भागों में अभी भी एक फसलीय कृषि पद्धति है जिसका प्रमुख कारण सिंचाई सुविधाओं का अभाव और मानसून पर कृषि की अत्यधिक निर्भरता है। कुछ भागों में द्विफसली कृषि पद्धति भी है, जहाँ सिंचाई की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। और जहाँ सिंचाई की उन्नत सुविधाएँ है वहाँ जायद फसलें भी देखने को मिलती हैं। परंतु उनकी संख्या अभी कम ही कही जा सकती है। म.प्र. में फसल प्रारुप परम्परागत है व्यावसायिक नही है परम्परागत फसल प्रारूप के आधुनिक न हो पाने में कुछ समस्या है। म.प्र. के फसल प्रारूप की मुख्य समस्याएँ निम्नवत हैं।

2.कृषि पद्धति परम्परागत :– म.प्र. में कृषि फसल प्रतिरूप अभी भी परम्परागत है। यहाँ एक फसली कृषि पद्धति व आंषिक रूप से द्विफसली कृषि पद्धति प्रचलित है। कुल बोया गया क्षेत्रफल वर्ष 2007–08 में 20519 हजार हेक्टेयर था। जिसमें से द्विफसली क्षेत्रफल मात्र 5729 हजार हेक्टेयर था।

3.पूँजी की कमी :– म.प्र. का किसान गरीब है। यहाँ अधिकांष किसान कर्ज के बोझ तले दबे हुए हैं उनके पास इतना पूँजी नहीं है कि आधुनिक पद्धति से कार्य कर सकें। इसलिए परंपरागत कृषि आदानों की सहायता से ही कृषि कार्य करते हैं। जिससे फसल के प्रतिरूप में परिवर्तन नही हो पा रहा हैं

4.अनियमित मानसून में फसल चक्र के चयन की चुनौती :– पिछले कई वर्षों से मानसून के रूप को देखें तो स्थिति बेहद चिंताजनक है। भले ही आज इसकी तरफ किसी का ध्यान केन्द्रित न हो परन्तु समस्या विकराल है। एक ऐसी समस्या जिसका समाधान किसी के पास नहीं है क्योंकि प्रकृति ही मानसून के आवक–जावक के लिए जिम्मेदार है। जिस पर किसी का जोर नहीं चल सकता है। यहाँ प्रश्न यह उठता है कि ऐसा कौन सा फसल चक्र अपनाया जाये कि कृषि उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव न डाल सके साथ ही रबी खरीफ और जायद की फसलें प्रभावित न हों। वैज्ञानिकों का मानना है कि बिलंब से हुई बोनी के कारण करीब 10–20 प्रतिषत उत्पादन कम होता है। इससे जहाँ खरीफ प्रभावित होता है वहीं रबी एवं जायद की फसल स्वतः प्रभावित हो जाती हैं। ऐसे में जरूरी है कि ऐसी किस्मों पर जोर दिया जाये जो कम समय में पककर तैयार हो जाए और देरी से हुई बोनी का उन पर कोई प्रभाव न पड़े।

मानसून की अनियमितता और असमान वितरण में तेजी तथा कृषि क्षेत्र के विकास को बनाये रखने में मुख्य बाधाओं में से एक है 2007–2011 के बीच में प्रदेश सूखे की चपेट में रहा है प्रदेश के 37 से 41 जिलों में अत्याधिक सूखा देखा गया था सिचाई अंतगर्त कुल कृषि योग्य भूमि का केवल 32.5 प्रतिशत था। शेष वर्षा पर निर्भर है। 67.8 प्रतिशत सिंचित क्षेत्र कुओं नलकूपों और भूमिगत जल पर निर्भर है इसलिए भूजल का स्तर घटना चिंता का कारण बन सकता है।

5.उन्नत बीजों तक पहुंच की चुनौती :– उन्नत बीजों की गुणवत्ता के साथ किसानों तक उन्नत बीजों की उपलब्धता अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू है जो कि वर्तमान में कृषकों की महत्वपूर्ण समस्याओं में से एक है। वर्तमान समय में ऐसी किस्मों के विकास की आवष्यकता है जो सभी संसाधनों का प्रभावकारी उपयोग कर सके व अधिक उत्पादन दे सके। अभी भी हमारे देश में अनाज की फसलों के उत्पादन का 81 प्रतिशत (गेहूं) से लेकर 229 प्रतिषत (सूरजमुखी) तक बढ़ाया जा सकता है। अतः उन्नत बीज जिनकी अंकुरण क्षमता अधिक हो तथा जो बीमारी, कीट, खरपतवार, अन्य फसल के बीज व अन्य बाहरी अक्रिय पदार्थो से मुक्त हो की अत्यंत आवश्यकता हैं। किसानों की उन्नत बीजों तक पहुंच, खरीद पाने की क्षमता, आसानी से उपलब्धता एवं किस्मों की जानकारी एक कठिन समस्या है जिसे हल करना सरकार के लिए एक चुनौती है।

6.कृषि आदानों की उपलब्धता :– म.प्र. में आधुनिक कृषि आदानों में सबसे अधिक प्रचलित आदान ट्रेक्टर हैं। ट्रेक्टर के अलावा थ्रेषर, हारवेस्टर आदि भी हैं किसान की आय कम होने के कारण व जोत का आकार छोटा होने के कारण यह प्रत्येक किसान के सामथर्य की बात नहीं हैं फिर भी म. प्र. में कृषि आदानों की वृद्धि हो रही हैं। किसानों का रूझान नई तकनीकी की और बढ़ रहा है लेकिन इसकी गति धीमी है।

7.कृषकों की अज्ञानता :– कीटों के लिए कीटनाशक तो बहुत है लेकिन लापरवाही के कीटों का उपचार शायद किसी के पास नही है। पूरा देश जानता है। कि फसल का बहुत बड़ा हिस्सा हर साल कीट चट कर जाते हैं। इसके बावजूद किसान नहीं जागता हैं यह भी सच है कि इसके लिए केवल अभी हाल में ऐसौचेम ने पाया है, कि हमारे देश में लापरवाही के चलते छिड़के जाने वाले कीटनाशकों के कारण कीड़े–मकोड़े और खरतपतवार से खड़ी फसल को भारी क्षति पहुँचती हैं परिणामतः हर साल लगभग 1000 अरब की कृषि उपज का नुकसान होता है।

8.न्यूनतम समर्थन मूल्य का लाभ ना मिल पाना :– कृषि लागत एवं मूल्य आयोग (CACP) की अनुसंशा पर सरकार द्वारा समस्त राज्यों की कृषि लागत को ध्यान में रखते हुये न्यूनतम समर्थन मूल्य को घोषित किया जाता है। जबकि प्रत्येक राज्य की भौगोलिक एवं कृषिगत भिन्नताएं होती है। इस कीमत का अधिकतम लाभ वे ही राज्य प्राप्त कर पाते है जहां उन्न्त सिंचाई सुविधाओं के साथ–साथ कृषि क्षेत्र तक पहुंच सुगम होती है। जैसे पंजाब, हरियाण आदि। मध्यप्रदेश जैसे विकासशील राज्यों के किसानों को इस कीमत का पूर्ण लाभ प्राप्त नहीं हो पाता है।

9.शहरीकरण का बढ़ता दबाब :– शहरीकरण की प्रवृत्ति के कारण गांव का शहरों में विलय एवं कृषि भूमि आवासीय

और व्यवसायिक भूमि में परिवर्तन हो रहा है जो कृषि भूमि के क्षेत्रफल को संकुचित कर रहा है। इस प्रवृत्ति के कारण प्राकृतिक कारणों से भिन्न कृषि के विकास में गंभीर मानवीय चुनौती है।

10. कृषि में बढ़ता पूंजीवाद :– कृषि में महंगा निवेश होने के कारण छोटे एवं सीमांत किसान बड़े किसानों पर निर्भर है। पूंजीपति किसान जिनके पास कृषि के समस्त आदान उपलब्ध है वे कृषि आदानों को किराय पर उपलब्ध कराते है। ये किसान एक प्रकार का कार्टेल बना लेते है जो कृषि आदानों को ऊँची कीमतो पर उपलब्ध कराते है। छोटे किसान या तो अपनी जमीन उनकों किराये पर देने के लिये मजबूर हो जाते है या मंहगी खेती करने का जोखिम उठाते है जिससे वो कर्ज में डूब जाते है। इस तरह से एक अनकहा शोषण कृषि क्षेत्र में व्यापत है जो भविष्य में वर्ग संघर्ष की स्थिति उत्पन्न कर सकता है। पूंजीपति किसान उच्च आय वर्ग के साथ सामाजिक प्रतिष्ठा भी रखते है जिनका समाज दबदबा होता है छोटे या सीमांत किसान किसी ना किसी दृष्टि से इनके चंगुल फसा होता है तथा मेहनत करने के बाबजूद निम्न स्तर का जीवन यापन करने के लिए मजबूर होता है।

कृषि विकास की सरकारी नीतियाँ :–

1.कृषि नीति संबंधी मामलों में तुरन्त निर्णय लेने के लिये कृषि केविनेट का गठन किया गया।
2.फसल ऋण तथा किसानों को साख उपलब्ध कराने के लिये सहकारीता के माध्यम से शून्य प्रतिशत ऋण उपलब्ध कराया गया।
3.किसानों के बैंक खातों पर सीधे आर्थिक सहायता पहुंचाना।
4.रासायनिक खादों की अग्रिम भंडार सुविधा उपलब्ध कराना।
5.नई योजनाओं एवं नीतियों के माध्यम से कृषि को लाभ का सौदा बनाना।
6.कृषि बजट अलग से प्रस्तुत करना।
7.स्प्रिकलर सिचाई सुविधा को 30 प्रतिशत टापअप आर्थिक सहायता द्वारा प्रोत्साहित करना।
8.हलधर योजना द्वारा 1500 रूपये की सहायता से गहरी जुताई के अभ्यास को प्रोत्साहित करना।
9.किसान मृदा स्वास्थ कार्ड का वितरण।
10.वृहत पैमाने पर जैविक कृषि को अपनाने के उद्देश्य से 2011 में जैविक कृषि नीति की घोषणा की गई है।
11.मक्के की उन्नत किस्म के उत्पादन को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से एस सी/एस टी किसानों को 90 प्रतिशत तक आर्थिक सहायता उपलब्ध कराना।

पूँजी की समस्या का हल :

भारतीय किसान की आर्थिक अवस्था सुधारने के लिये इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि उसे ऋणों से छुटकारा दिलाया जाए तथा भविष्य के लिये उचित साख–सुविधा का प्रबंध किया जाए। इसलिए ऋणग्रस्तता की समस्या के समाधान के लिए सुझाव निम्नानुसार है :

(क) अनावश्यक ऋणों की रोकथाम : ऋणग्रस्तता रोकने के लिये आवश्यक है कि किसान अनुत्पादक कर्जे कम से कम लें। उन्हें फिजूल खर्ची कम करनी चाहिये। इसके लिये आवश्यक है कि किसानों को शिक्षा दी जाए तथा उनके दृष्टिकोण को विशाल किया जाए। रेडियो न्यूजरील आदि द्वारा प्रचार करके उनकी फिजूलखर्ची को रोका जाए।
(ख) आय में वृद्धि : किसान की आय में वृद्धि होनी चाहिये। खेत में अच्छे बीज, उत्तम खाद, मशीनें, सिंचाई आदि का उचित प्रयोग किया जाना चाहिये जिससे कृषि उपज बढ़ सके। सहायक धन्धों का विकास किया जाना चाहिये। कृषि–उपज का उचित प्रबंध किया जाना चाहिये।

(ग) बचत का प्रोत्साहन : किसानों में बचत करने की आदत पैदा की जानी चाहिये। जब फसल अच्छी हो तो किसानों को धन बचाने का प्रयत्न करना चाहिये। इसके लिये गांवों में बचत बैंक सहकारी समितियां अधिक से अधिक संख्या में खोलनी चाहिये।

(घ) महाजन के कार्यों पर नियंत्रण : ऋण के भार को अनावश्यक रूप से बढ़ने से रोकने के लिये यह आवश्यक है कि महाजन के कार्यों पर रोकथाम लगाई जाए। इस संबंध विभिन्न राज्यों में कई कानून पास किए गए हैं। अब महाजन को अपना कार्य करने के लिये लाइसेंस लेना पड़ता है। ऋणी जो भुगतान करता है उसका हिसाब देना पड़ता है। एक निश्चित दर से अधिक ब्याज नहीं लिया जा सकता। यदि कोई महाजन इन नियमों को तोड़ता है तो उसे सजा भुगतनी पड़ती है।

(ड़) ऋण देने वाले पर नियंत्रण : भारत में महाजन किसानों को सरलता से अनावश्यक कार्यों के लिये भी कर्जा दे देते थे इसका मुख्य कारण यह था कि कर्जा वसूल न होने की दशा में महाजन किसान की जमीन, मकान, पशु आदि सब कुर्क करवा सकते थे। परन्तु अब सरकार ने ऐसे कानून पास कर दिए हैं जिनके अनुसार कर्जों के बदले किसाान की जमीन, पशु, औजार, फल, मकान आदि की कुर्की नहीं कराई जा सकती।

(च) ग्रामीण ऋण के लिये नई संस्थाएं : महाजनों के स्थान पर साख देने के लिये नई संस्थाएं बनाई जायें। इसके लिये अल्पकालीन साख देने के लिये सहकारी साख समितियों का विस्तार किया जा रहा है। रिजर्व बैंक किसानों को सहकारी बैंकों द्वारा काफी रूपया उधार देता है। राष्ट्रीय बैंकों ने भी ग्रामीणों को कम ब्याज पर काफी उत्पादक ऋण देने प्रारंभ कर दिये हैं।

अन्त में राहत आखिरकार किसे अच्छी नहीं लगती, उद्योग हो या व्यापार, किसान हो या आम गरीब, सभी को राहत की जरूरत हमेशा ही रहती है। अपेक्षाएँ इतनी ज्यादा होती है कि जितनी पूर्ति की जाये फिर भी कम ही रहती है।

इन दिनों कृषि और कृषक को लेकर राष्ट्रीय स्तर पर जिस तरह से बातें की जा रही है और विभिन्न योजनाओं के माध्यम से इनकी उन्नति के प्रयास हो रहे हैं वह बहुत कुछ राहत देने वाले हैं। लेकिन नौकरशाही इनके मार्ग का रोड़ा न बने तो किसान की माली हालत को सुधारना कोई अजूबा नहीं है। म.प्र. में राज्य सरकार ने 3% के ब्याज दर पर किसानों को ऋण उपलब्ध कराने का आह्वान किया है। इसके साथ ही सात संकल्पों में से एक संकल्प कृषि को विकसित कर लेता है। इसके लिए कृषि को लाभ का सौदा बनाना पशुपालन को बढ़ावा देने वाली बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए लक्ष्य निर्धारित किये जा रहे हैं। 1 अप्रैल 2009 से किसानों को 3% की ब्याज दर पर ऋण मुहैया कराया जायेगा। यह राहत भरा कदम तो है लेकिन जिन बैंकों से ऋण दिया जाए क्या वे किसानों को सहयोग करेंगे। इनकी पुख्ता व्यवस्था होना चाहिए। राज्य में 26 जिला सहकारी बैंक और सहकारी कृषि बैंक तथा ग्रामीण कृषि बैंक जो 1200 शाखाओं के माध्यम से किसानों को अल्पावधि एवं दीर्घावधि कर्ज उपलब्ध करा रहे है। इन बैंकों ने प्रदेश के 9.80 लाख किसानों को 7900 करोड़ के कर्ज दिए हैं। इनमें से 2007–08 में 16.88 करोड़ के कर्ज दिये है। वहीं चालू वित्तीय वर्ष में 73.74 करोड़ के कर्ज दिये गये है। अब चूँकि ब्याज दर कम हुई है इसलिए ऋण वितरण और अधिक बढ़ेगा इससे वित्तीय संस्थाओं पर एक अतिरिक्त बोझ बढ़ेगा। हालाँकि केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा 697.75 करोड़ की सहायता राशि की स्वीकृति प्रदान की गई है।

म.प्र. के करीब 10 लाख किसान इस सरकारी फैसले से खुश तो है लेकिन वित्तीय संस्थाएँ भरपूर सहयोग करें इसकी उम्मीद कम है। अभी तक जिस तरह किसान क्रेडिट कार्ड और किसानों को दी जाने वाली वित्तीय सुविधाओं में बैंकों का बहुत ज्यादा सहयोग नहीं दिया हैं। निर्धारित लक्ष्य का 50% भी पूरा नहीं हुआ है। गाँव में स्थित बैंकों की शाखाएँ किसानों को गुमराह कर उन्हें तरह–तरह की सरकारी प्रक्रियाएँ बताई जा रही है। शिकायतें तो यहाँ तक होती हैं कि सभी प्रतिक्रयाएँ कर देने वाले किसान भी वास्तविक लाभ से वंचित रह जाते हैं। कम ब्याज पर ऋण मुहैया कराने की शुरूआती दौर में बहुत सारी व्यावहारिक कठिनाईयों से गुजरना पड़ सकता है। जब समस्याएँ आयेंगी उनका समाधान होगा तब कहीं जाकर किसानों को राहत का एहसास धीरे–धीरे होने लगेगा।

आदान समस्याएं एवं सुझाव

हरित क्रांति का विस्तार :– म. प्र. में हरित क्रांति का विस्तार प्रमुख उददेश्य है। आधुनिक पद्वति से कृषि को बढ़ावा दिया जायेगा, जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि हो सके। यह कार्य ग्राम सभाओं और किसानों के सहयोग से किया जायेगा। इसके अलावा जल संग्रहण, क्षेत्र प्रबंधन और मिट्टी की दशा में सुधार हेतु कदम उठाये जायेंगे। कृषि जलवायु आधारित कार्यक्रम के लिए 200 करोड़ रूपये इस वर्ष आबंटित किये गये हैं।

भण्डारण क्षमता में वृद्धि :– उचित भण्डारण की व्यवस्था न होने से प्रति वर्ष लगभग 3 से 4 लाख टन चांवल, 1.25 लाख टन गेहूँ को कीड़े या चूहे नष्ट कर देते हैं। भारत में कीट–रोग के प्रकोप से एक लाख चालीस हजार करोड़ रूपये मूल्य की फसलें प्रतिवर्ष नष्ट हो जाती है। खाद्य एवं कृषि संगठन के प्रतिवदेन के अनुसार, प्रतिवर्ष जितनी फसलें बर्बाद हो जाती हैं, उससे लगभग 70 हजार व्यक्तियों को दो बार भोजन कराया जा सकता हैं भंडारण की क्षमता में वृद्धि होने से उत्पाद की बरबादी में कमी आयेगी।

उर्वरक अनुदान की नीति :– इस नीति का उद्देश्य उर्वरक उद्योग के सामान्य विस्तार लेखाओं पर ध्यान देना है, जिससे फसलों की उत्पादकता बढ़ेगी और किसानों की आमदनी बढ़ेगी। पोषक तत्व आधरित उर्वरक अनुदान का लाभ सीधे किसानों को मिलेगा। इस नीति के अंतर्गत किसानों को आसानी से अधिकतम खुदरा मूल्यों पर मिल सकेंगे। उन्नत कृषि तकनीक विस्तार में उर्वरक महत्वपूर्ण आदान है, इसलिए उर्वरकों पर मिलने वाला अनुदान बजट जारी रखा गया हैं।

राष्ट्रीय कृषि विकास योजना :– वर्ष 2008–09 में राष्ट्रीय कृषि विकास योजना शुरु हुई थी। केन्द्रीय बजट में इस योजना हेतु 6722 करोड रु. का प्रावधान किया गया था।

पौध संरक्षण :– कीट एवं रोगनाशी दवाओं की बढ़ती हुई मंहगाई और इनके लगातार उपयोग के बावजूद कीड़ो, रोगों का प्रभावी ढंग से नियंत्रण नहीं हो पा रहा है जिसके कारण उत्पादन की लागत बढ़ती जा रही है। पौध संरक्षण पर जोर देने के लिए केन्द्रीय बजट में 58.78 करोड़ रूपये आबंटित किये गये हैं।

मध्यप्रदेश का कृषक शिक्षित नहीं है कृषि से संबंधित ज्ञान या तो परंपरा में मिला है या अनुभव से अर्जित किया है आधुनिक कृषि पद्धति तकनीक, उन्नत बीज, सिंचाई सुविधाएं, रासायनिक खाद आदि की जानकारी किसानों को नहीं रहती है। यदि उक्त जानकारी उपलब्ध करा दी जाएं तो कृषि विकास में क्रांतिकारी परिवर्तन किया जा सकता है। किसान को संचार के साधन जैसे – मोबाईल, जनजागरुकता कार्यक्रम, प्रशिक्षण आदि की सुविधा उपलब्ध करायी जा सकती है। जैसे शासन गहरी जुताई अभ्यास के लिए हलधर योजना लागू की है। इसी तरह से अन्य कृषि संबंधी कार्यो के लिए भी किया जा सकता है।

सिचाई के साधनों का विस्तार होने से कृषि उत्पादकता एवं उत्पादन दोनों मे परिवर्तन होगा। छोटे एवं सीमांत कृषकों को सिचाई के साधन आसानी से उपलब्ध कराकर इस चुनौती का समाधान किया जा सकता है। शासन स्तर पर गॉव–गॉव में कृषि टेंट लगाकर आदानों की पूर्ति आसान कीमत एवं सरलता से की जा सकती है। प्रदेश में सिचाई मुख्यतः विद्युत पर निर्भर है, अतः विद्युत की आपूर्ति में वृद्वि करनी होगी। जैसे औधोगिक क्षेत्र के लिए पृथक से विद्युत आपूर्ति की जाती है, ठीक उसी प्रकार कृषि क्षेत्र के लिए भी किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त सौर उर्जा के माध्यम से भी विद्युत आपूर्ति में वृद्वि की जा सकती है।

इलेक्ट्रानिक मंडी, मोबाईल पर संदेश द्वारा सभी प्रकार की कृषि आदानों एवं विपणन की जानकारी का प्रचार–प्रसार करने से विपणन व्यवस्था में सुधार एवं कृषकों में जागरुकता का संचार होगा। गॉव–गॉव में बिक्री केन्द्रों की स्थापना, भंडारण की व्यवस्था, बिचौलियों की समाप्ति कर कृषकों को अनुकूलतम बाजार उपलब्ध कराया जा सकता

है।

शहरीकरण की बढ़ती प्रवृत्ति के कारण कृषि भूमि का अधिगृहण रोकना अनिवार्य है, इसके स्थान पर यह हो सकता है कि नगर प्रबंधन एवं योजनाओं के नगर को सीमित स्थान पर ही बहुमंजिला इमारतों के साथ विकसित किया जाए। जिससे इसका प्रभाव कृषि भूमि पर न हो। यदि कृषि भूमि को नगर के आवासीय एवं व्यवसायिक कार्यो में उपयोग की प्रवृत्ति बढ़ेगी तो भविष्य में हमें गंभीर खाद्य संकंट का सामना करने के लिए तैयार रहना होगा।

देश एवं अन्य राज्यों की तुलना में म.प्र. की हमेशा यह कमजोरी रही है कि इस प्रदेश में रासायनिक उर्वरक एवं पौध संरक्षण दवाइयों का बहुत कम उपयोग होता रहा है। आज जैविक खेती के युग में हम रासायनिक उर्वरक एवं पौध संरक्षण औषधि को अपनी ताकत में बदल सकते है।

ध्यान दिये जाने योग्य है कि वर्ष 2005–06 के दौरान प्रदेष में उर्वरक की खपत लगभग 53 किलो/हे. थी जबकि पूरे देश का औसत लगभग 100 किलो/हे. था। उधर मंडला, डिंडोरी, सीधी, उमरिया, अशोक नगर तथा पन्ना जिले की औसत खपत क्रमशः 14.58, 3.14. 17.34, 5.08, 9.93 एवं 16–90 किलो/हे. थी। इसी के साथ पौध संरक्षण दवाइयों का उपयोग भी 170 ग्रा./हे. रहा है जबकि देश में 440 ग्रा. एवं जापान में 10–12 किलो/हे. वर्ष उपयोग कियाा जा रहा है। आज की परिस्थित रसायनों के दुष्परिणाम एवं बढ़ती हुई कीमतों की बीच म.प्र. के लिए यह कभी भी संभव नहीं होगा कि वह देश या अन्य राज्यों के स्तर तक पहुँच सके। उर्वरकों एवं पौध संरक्षण के बल पर उत्पादन वृद्धि कर सके। अन्य राज्यों उदाहरणस्वरूप उत्तरांचल एवं सिक्किम जहाँ रासायनिक उर्वरकों एवं पौध संरक्षण दवाइयों का उपयोग कम था। उसके द्वारा अपने राज्यों में जैविक कृषि उत्पाद राज्य घोषित किया जा चुका है एवं ये राज्य देश एवं विदेश में जैविक उत्पाद की बढ़ती माँग का लाभ ले रहे है। अतः म.प्र. की अपनी कम रासायनिक उर्वरक एवं पौध संरक्षण औषधि उपयोग की कमजोरी को जैविक आदान के रूप में एक सशक्त ताकत में बदलने का सर्वोत्तम अवसर है। जैस पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है कि पूरे देश में प्रमाणित जैविक उत्पादन में प्रदेश पूरे देश में अग्रणी है। अन्य क्षेत्रों में बड़ी संख्या में व्यापारी जैविक कपास उत्पादन के लिए प्रदेश में आ रहे है। इसी प्रकार कई समूह जैविक खाद्यान्न एवं सब्जियों के उत्पादन के लिए भी आ रहे है। प्रदेश शासन को चाहिए कि वे प्रदेश की इस विशिष्ट परिस्थिति का लाभ उठाएँ। जैविक कृषि पद्धति को बढ़ावा दें तथा परम्परागत खेती के जिले विशेष रूप से मंडला, डिंडोरी, सीधी, उमरिया में विशेष कार्यक्रम संचालित कर प्रभावीकरण करने की व्यवस्था भी करें। इस प्रकार देश एवं विदेश के लिए उचित स्तर का जैविक उत्पाद भी मिल सकेगा। कृषक कम लागत में अधिक उत्पादन कर स्वावलम्बी एवं स्वाभिमानी बन सकेंगे तथा अपनी आर्थिक स्थिति भी सुधार सकेंगे। म.प्र. के कृषकों के लिए यह एक स्वर्णिम अवसर है जबकि वे पूर्णतः जैविक कृषि उत्पादन पद्धति अपनाकर उत्पादन लागत कम कर, अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते है। वहीं दूसरी ओर उच्च गुणवत्ता वाले जैविक उत्पाद को देश एवं विदेश में विक्रय कर अच्छी कीमत भी प्राप्त कर प्रदेश एवं स्वयं के लिए समृद्धि ला सकते हैं। बस आवश्यकता है तो सभी स्तरों पर एक समग्र प्रयास की फिर देखिए विश्व के जैविक खेती के नक्शे पर म.प्र. का नाम अवश्य ही शीर्ष पर अंकित होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः

1संचालनालय किसान कल्याण तथा कृषि विकास म.प्र. भोपाल।
2.डॉ. कुमार प्रमिला : मध्यप्रदेश एक भौगोलिक अध्ययन, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2010.
3.मिश्र एवं पुरी : भारतीय अर्थव्यवस्था, हिमालया पब्लिसिंग हाऊस, मुंबई, 2012.
4.शर्मा, रमेशचंद : कृषि अर्थशास्त्र, राजीव प्रकाशन, मेरठ, 1978.
5.राव एवं कोण्डावार : मध्यप्रदेश का आर्थिक विकास, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 1995.
6.शाह, के.एन. : कृषि अर्थशास्त्र के सिद्धान्त, कॉलेज बुक डिपो, जयपुर, 1970.
7.गुप्ता, पी.के. : कृषि अर्थशास्त्र, वृंदा पब्लिकेषन्स प्रा. लि., दिल्ली–91।

पत्रिकाएँ

1.कृशक दूत (मासिक), भोपाल।
2.योजना, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, 542 योजना भवन, नई दिल्ली।
3.कुरुक्षेत्र, प्रकाषन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली।
4.आर्थिक समीक्षा, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार।
5.कृषि जगत, सूचना एवं जनसंचार विभाग, मध्यप्रदेश शासन, भोपाल।
6.म.प्र. का आर्थिक सर्वेक्षण, 2011–12, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, भोपाल।

Websites:

1.agricoop.nic.in
2.www.nsdcindia.org
3.www.agricultureinformation.com
4.www.krishakjagat.org
5.www.mpkrishi.org